www.thearyasamaj.org

जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष -५९ अंक - ११
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक :१००) रु०
आजीवन -१०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

कार्त्तिक-मार्गशीर्ष : सम्वत् २०७३ वि०

नवम्बर – २०१६

स्मृति शेष

आचार्य डॉ० धर्मवीर

पूर्व प्रधान, परोपकारिणी सभा, अजमेर

जन्म : २० अगस्त, १९४६ – मृत्यु : ६ अक्टूबर, २०१६

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

विजयादशमी पर्व

आर्य समाज कलकत्ता के सभागार में मंगलवार दिनांक ११.१०.२०१६ को प्रातः १० बजे से विजयादशमी पर्व मनाया गया। इस अवसर पर यज्ञ के अतिरिक्त एक सभा का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता पूर्व प्रधान श्री श्रीराम आर्य जी ने की। इस अवसर पर वक्ताओं ने विजयादशमी पर्व के आयोजन के महत्व तथा मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम जी द्वारा लंका विजय हेतु प्रयाण एवं उनके जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर जिन वक्ताओं ने अपने विचार प्रस्तुत किये उनमें थे — पं० आत्मानन्द शास्त्री, पं० देवनारायण तिवारी, श्री मनीराम आर्य, श्री वीरेश जी आर्य ने इस अवसर पर भजन प्रस्तुत किया।

दुर्गा पूजा पर आर्ष साहित्य द्वारा प्रचार एवं प्याऊ व्यवस्था

आर्य समाज कलकत्ता (युवा-शाखा) द्वारा दुर्गापूजा के अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता के सामने साहित्य प्रचार हेतु स्टाल लगाया गया जिसमें पूजा भ्रमणार्थियों ने अच्छी संख्या में आर्ष साहित्य को क्रय किया। साथ ही साथ प्याऊ की भी व्यवस्था की गयी जिसमें शुद्ध पेय जल का वितरण युवा-शाखा के सदस्यों द्वारा किया गया।

आर्यसमाज कलकत्ता का १३१वाँ वार्षिकोत्सव

२४ दिसम्बर, २०१६ से १ जनवरी, २०१७ पर्यन्त

स्थान :- हृषिकेश पार्क, आम्हर्स्ट स्ट्रीट
कोलकाता-७००००९

आमन्त्रित विद्वान् :- आचार्या सूर्या देवी चतुर्वेदा
आचार्य डॉ० शिवदत्त पाण्डेय
श्री नरेश दत्त आर्य (भजनोपदेशक)

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ५९ अंक — ११
कार्त्तिक-मार्गशीर्ष २०७३ वि०
दयानन्दाब्द १९२
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११७
नवम्बर — २०१६

आद्य सम्पादक
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय
(स्मृति शेष)

सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल

सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्यप्रकाश जायसवाल
पं० योगेशराज उपाध्याय

शुल्क : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

इस अंक की प्रस्तुति

१. आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ		२
२. इस अंक की प्रस्तुति		३
३. द्वेष से त्राण (४६)	वेद-वीथिका से	४
४. स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र	पं० लेखराम द्वारा संकलित	७
५. द्रौपदी के पाँच पति नहीं थे	परीक्षित मण्डल प्रेमी	१०
६. आज के विकृत संस्कार	पं० उम्मेद सिंह विशारद	१३
७. सूचना		१६
८. माता अदीन व कर्मशील बनावें	डॉ अशोक आर्य	१७
९. शिक्षा	योगेन्द्र दम्माणी	१९
१०. गंगा प्रसाद उपाध्याय का दृष्टिकोण	राधे मोहन	२२
११. ''काल''—''समय'' की महिमा	मृदुला अग्रवाल	२४
११. बाल जगत् — बिलाव		२६
१२. आर्य समाज कलकत्ता के प्रकाशन		२७

आर्य समाज कलकत्ता
१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६
दूरभाष : २२४१-३४३९ ***email : aryasamajkolkata@gmail.com***

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है ।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा ।

www.thearyasamaj.org

४६

द्वेष से त्राण

प्राग्नये वाचमीरय वृषभाय क्षितीनाम् ।

स नः पर्षद् अति द्विषः ।।

ऋ० १०-१८६-१

शब्दार्थ :-

अग्नये	=	मार्गदर्शक प्रभु के लिए	वाचम्	=	वाणी को, स्तुति को
प्र-ईरय	=	विशेष प्रेरित करो	वृषभाय	=	अभीष्ट वर्षक के लिए
क्षितीनाम्	=	मनुष्यों के	सः	=	वह प्रभु
नः	=	हमको	अति पर्षद्	=	पार उतारेगा
द्विषः	=	द्वेषों से			

भावार्थ :-अभीष्ट की वर्षा करने वाले मार्गदर्शक प्रभु का विशेष रूप से भजन करो । वही प्रभु हमें द्वेषों से पार उतारेंगे ।

विचार विन्दु :

१. द्वेष कब और क्यों होता है ? **२. द्वेष से हानि ।**

३. प्रभु भजन से द्वेष कैसे दूर होता है ? **४. प्रभु का आश्वासन ।**

व्याख्या

प्रस्तुत मंत्र में द्वेष से पार उतरने के उपाय के रूप में प्रभु का गुणगान करने की अनुशंसा हैं । प्रभु का गुणगान क्यों करें ? तो मंत्र में यह कहा गया है कि जब हम प्रभु का गुणगान करेंगे तो भगवान के गुण हमारे हृदय को प्रभावित करेंगे और हम द्वेषों से पार उतर जायेंगे । ऐसा अनुभव है कि द्वेष बहुत भयानक है और उनसे मनुष्य की बड़ी हानि होती है । सच है द्वेष करने वाले का मन मर जाता है । वेद में कहा है :-

'यथा भूमिर्मृत मना मृतान्मृतमनस्तरा'

जैसे भूमि का मन मृत होता हैं, वैसे ही ईष्यालु का मन मर जाता है । दूं तो भूमि के मन होता ही नहीं । उसकी कोई निन्दा करे या स्तुति । भूमि से उसको क्या लेना-देना ? मनुष्य के हृदय में जब भी ऐसे भाव उठतें है कि दूसरे की कीर्ति, प्रशंसा और यश सुनकर स्वयं का मन जलने लगता है तो उसके हृदय में द्वेष-भाव जगते हैं । वस्तुतः द्वेष करने वाले के मन में दूसरे के लिए अनिष्ट की कामना होती है। द्वेष करने वाला दूसरे मनुष्य की भलाई, मंगल, कल्याण की कामना कर ही नहीं सकता । द्वेष करने वाला अपनी स्वयं की बड़ी भारी हानि कर लेता हैं।

www.thearyasamaj.org

द्वेष करने वाले की सोच सकारात्मक नहीं हो पाती । वह नकारात्मक सोचने का अभ्यासी हो जाता है । ऐसे मनुष्य की अपनी क्रियाशीलता नष्ट हो जाती है । द्वेष से कम से कम निम्न हानियां तो होती ही हैं ।

(१) द्वेषी मनुष्य का विवेक मर जाता है । वह अपना भी अच्छा बुरा नहीं सोच पाता ।

(२) द्वेषी-व्यक्ति में विचारहीनता, चिन्तन का अभाव हो जाता है । जो बिना विचार के कार्य करेगा उसका कार्य भी नष्ट होगा और उसे पछताना भी पड़ेगा । नीतिकार ने ठीक ही कहा है -

'बिना विचारै जो करै सो पाछे पछताय,
काम बिगाड़ै आपनो जग में होत हंसाय ।।'

(३) द्वेषी पुरुष की क्रियाशीलता और उसकी सर्वोत्तम क्षमता, उत्साह सब नष्ट हो जाता हैं । वह अपना भी कार्य अच्छी तरह नहीं कर सकता ।

अतः मंत्र में यह भावना बतायी गई है कि द्वेष से पार उतरने के लिए भगवान का भजन करना चाहिए । द्वेष बड़ा भारी राज-रोग है । इसकी कोई औषधि नहीं । इसकी एक ही औषधि है—प्रभु का भजन । कठिनाई यह है कि द्वेषी-पुरुष का प्रभु भजन में मन नहीं लगता । दुर्योधन युधिष्ठिर की सुकीर्ति से द्वेष करता था और जब उसने युधिष्ठिर के राजसूय-यज्ञ में उसका धन-वैभव देखा तो वह ईर्ष्या, द्वेष, डाह से जलने लगा । श्रीकृष्ण ने धर्म की मर्यादा समझानी चाही किन्तु दुर्योधन जैसे द्वेषी-व्यक्ति भजन न करने का बहाना बना लेते हैं । वे कहते हैं -

''जानानि धर्मं, न च मे प्रवृत्तिः ।''

धर्म तो मैं भी जानता हूं लेकिन उसमें मन नहीं लगता । अधर्म भी जानता हूँ पर उससे छुटकारा नहीं मिलता । अतः मेरा कोई अपराध नहीं है । वस्तुतः धर्म-अधर्म यह सब ऐसे ही बताये जाते हैं ।

द्वेषी व्यक्ति के लिए धर्म-अधर्म का विचार व्यर्थ है ।

द्वेष का कारण विकृत मानसिकता– द्वेष एक मनोविकार है । मनुष्य जब किसी अच्छी वस्तु को, अच्छे चरित्र को, अच्छे गुण को देखता है, तो स्वाभाविक ही मनुष्य के मन में प्रशंसा के भाव आते हैं । ये प्रशंसा के भाव मनुष्य की सज्जनता के परिचायक हैं । एक सूक्ति है—

''पर गुण परमाणुन् पर्वतीकृत्यनित्यम् ।
स्वहृदि विकसन्तः, सन्ति सन्तः कियन्तः ।।''

अर्थात् दूसरों के परमाणु जैसे छोटे गुणों को भी पर्वत की तरह विशाल बना कर अपने हृदय में स्थान देने वाले सज्जन व्यक्ति कितने हैं ? अर्थात् दूसरों के गुणों के प्रशंसक सज्जन लोग अधिक नहीं हैं । भाव यह है कि गुणों के प्रति प्रशंसा के भाव सज्जनता, सद्विचार के पोषण करने वाले हैं ।

यहीं यह भी विचारणीय है कि कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जो दूसरों के गुणों की निंदा करते हैं, उन्हें दूसरों के गुणों से, अच्छाइयों से, सज्जनता से इस प्रकार ईर्ष्या, द्वेष हो जाता है कि ये ईर्ष्यालु द्वेषी लोग अच्छे गुणवाले से डाह करने लगते हैं, सज्जन व्यक्तियों की निंदा करने लगते हैं । उनके

www.thearyasamaj.org

हृदय के प्रशंसनीय तत्व ईर्ष्या द्वेष में जलकर भस्म हो जाते हैं । इस विकारग्रस्त मानसिकता को एक उदाहरण से समझते हैं–

गुलाब का फूल सुन्दर होता है, मनमोहक होता है, सुगन्धि देता है, फूलों का राजा कहा जाता है । किन्तु प्रसिद्ध कवि निरालाजी ने कुकुरमुत्ता से कहलवाया है–

''अबे ! सुन बे गुलाब !
तूने पायी रंग खुशबू और आब ?
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है कैपिटलिस्ट ।''

हमारी दृष्टि में यह ईर्ष्या, द्वेष से प्रेरित गुलाब के लिए धिक्कार, विकृत मानसिक सोच का कुफल है । इसी तरह विकृत सोच ईर्ष्या द्वेष के पीछे सर्वत्र उपस्थित रहती है ।

अब विचार यह करना है कि प्रभु-भजन से द्वेष-भाव कैसे मिट जाते हैं ? वस्तुतः जो प्रभु के भजन में बैठेगा उसके मन में परमेश्वर के प्रति प्यार अवश्य पैदा होगा । हम भगवान् से प्रार्थना करते हैं –

(१) शरण में आये हैं हम तुम्हारी,
दया करो हे दयालु भगवन् ।
न हममें विद्या, न हममें बुद्धि,
न हममें साधन, न हममें शक्ति ।
तुम्हारे दर के हैं हम भिखारी, दया करो हे दयालु भगवन् ।

(२) हमारी सुधि लो करुणासिन्धु ।

या

अबलौं नसानी अब न नसैहौं ।

(३) हे दयामय आपका हमको सदा आधार हो,
आपके भक्तों से ही भरपूर यह परिवार हो ।

ऐसे सैकड़ों हजारों भजन भरे पड़े हैं । जब भक्त भगवान् से अपने कल्याण, मंगल के लिए प्रार्थना करता हैं तो उसे दूसरों के लिए अमंगल सोचने का अवकाश कहाँ है ?

कभी-कभी दूसरे ही हमसे द्वेष करते हैं । उससे बचने के लिए भी, उस द्वेष से पार उतरने के लिए भी हम भगवान से प्रार्थना करते हैं –

'योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मः
.....तं वो जम्भे दध्मः ।'

हे भगवान् ! जो हमसे द्वेष करता है या हम किसी से द्वेष करते हैं, उसे हम आपके न्याय में सौंपते हैं । प्रभु हमें द्वेष से बचाओ । दया करो हे दयालु भगवन् ।

•

www.thearyasamaj.org

स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र

प्रथम भाग

अध्याय- २

(सन् १८२४ ई० से १८७५; तदनुसार सं० १८८१ से १९३१ वि० तक)

बचपन : वैराग्य : गृहत्याग व संन्यास

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी को गुजरात में संवत १८८१ में हुआ था । पूरे भारतवर्ष में स्वामी जी का जन्म दिवस मनाया जाता है इसी अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता ने निर्णय किया कि पं० लेखराम द्वारा संकलित एवं आर्य महामहोपदेशक कविराज श्री रघुनन्दन सिंह निर्मल द्वारा अनूदित महर्षि स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र धारावाहिक प्रकाशित किया जाय, इसी शृंखला में प्रस्तुत है यह धारावाहिक जीवन-चरित्र — सम्पादक

(गतांक से आगे)

संवत् १९२०-१९२१ वि० आगरा में – विद्याध्ययन के समाप्त होने पर मैं आगरे में दो वर्ष रहा परन्तु समय-समय पर पत्र द्वारा अथवा स्वयं मिलकर मैं स्वामी जी के पास से शंकाओं का समाधान कर लिया करता था ।वहाँ से मैं ग्वालियर गया और वहाँ थोड़ा-सा वैष्णवमत का खंडन करना प्रारम्भ किया । वहां से भी मथुरा में स्वामी जी को पत्र भेजता रहा था । यहाँ ग्वालियर में एक माधवानुमताचार्य नामक पंडित था वह कारकुन (लेखक) का रूप बनाकर वाद आदि के सुनने के लिए बैठता। किसी समय मेरे मुख से जब कोई अशुद्धि निकलती तो झट पकड़ लेता । मैंने बहुत बार पूछा कि आप कौन हो परन्तु वह कहता कि मैं तो साधारण कारकुन (लेखक) हूँ, सुन-सुनकर परिचित हो गया हूँ, वह ऐसा कहता । एक दिन वैष्णव खड़ी रेखा लगाते हैं इस पर बातचीत चली तब मैंने कहा कि यदि खड़ी रेखा लगाने से स्वर्ग मिलता है तो सारा मुख काला करलेने से स्वर्ग के आगे भी कुछ मिलता होगा, ऐसा कहते ही उसे बहुत क्रोध आया और वह उठकर चल दिया । तब मुझे खोज करने पर विदित हुआ कि यह अनुमताचार्य है । ग्वालियर से मैं करौली गया । वहां एक कबीरपन्थी मिला । उसने एक बीर उसका यह कबीर ऐसा अनुवाद किया था और कबीर उपनिषद् है ऐसा वह मुझसे कहने लगा । वहाँ से आगे जयपुर को गया—वहाँ एक हरिश्चन्द्र विद्वान् पंडित था । वहाँ मैंने प्रथम वैष्णवमत का खंडन करके शैवमत की स्थापना की । जयपुर के राजा महाराज रामसिंह ने भी शैवमत को ग्रहण किया । इससे शैवमत का विस्तार हुआ और सहस्रो रुद्राक्ष मालाएँ मैंने अपने हाथ से दीं । वहाँ शैवमत इतना पक्का हुआ कि हाथी, घोड़े आदि सबके गले में भी रुद्राक्ष की मालाएँ पड़ गई ।

www.thearyasamaj.org

जयपुर से पुष्कर व अजमेर – जयपुर से मैं पुष्कर गया और वहां से अजमेर गया । अजमेर जाने पर शैवमत का भी खंडन करना आरम्भ कर दिया । वहाँ जयपुर के महाराज लाट साहब से मिलने के लिये आगरे जाने वाले थे । वृन्दावन में रंगाचार्य करके एक पंडित था । कहीं उससे शास्त्रार्थ न हो जाये इसलिये राजा रामसिंह जी ने मुझे बुलावा भेजा था । मैं जयपुर गया परन्तु मैंने शैवमत का भी खंडन करना प्रारम्भ कर दिया है यह समझते ही राजा जी को अप्रसन्नता हुई और मैं जयपुर छोड़कर निकल गया । फिर स्वामी जी के पास जाकर शंकाओं का समाधान कर लिया । वहाँ से फिर मैं हरिद्वार गया (१२ अप्रैल सन् १८६७)।

हरिद्वार के कुम्भ में पाखण्ड खण्डन का आरम्भ

मतमतान्तरों का खण्डन तथा सर्वस्वत्याग पाखण्डमर्दन ये अक्षर लिखकर ध्वजा मैंने अपने मठ पर लगाई । वहाँ वाद-विवाद बहुत हुआ, फिर मेरे मन को ऐसा प्रतीत होने लगा कि सारे संसार से विरुद्ध होकर और गृहस्थियों की अपेक्षा भी बहुत-सी पुस्तकों आदि का खटराग रखकर क्या करना है, इस हेतु से मैंने सब छोड़ दिया और कौपीन लगाकर मौन धारण कर लिया ।

तब से शरीर में जो राख लगानी प्रारम्भ की थी वह गतवर्ष बम्बई आने तक लगाता ही रहा था। रेल पर बैठने के समय से लेकर वस्त्र पहनने लगा । हरिद्वार में जो मैंने मौन धारण किया वह बहुत दिन नहीं रहा क्योंकि बहुत लोग मुझे पहचानते थे और एक दिन मेरी पर्णकुटी के द्वार पर किसी ने लिख दिया **निगमकल्पतरोगलितं फलम्** अर्थात् भागवत की अपेक्षा वेद कुछ भी अधिक नहीं है प्रत्युत भागवत के पीछे है । तब मुझसे वह सहन नहीं हुआ और मौनव्रत छोड़कर मैं भागवत का खंडन करने लगा ।

युक्त प्रान्त में शास्त्रार्थों की धूम :- काशी का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ–(संवत् १९२५ वि०) फिर ऐसा विचार किया कि ईश्वर कृपा से अपने को थोड़ा बहुत ज्ञान मिला है वह सब लोगों को कहना चाहिये। ऐसा निश्चय करके मैं फर्रूखाबाद आया । वहाँ से मैं रामगढ़ गया, रामगढ़ में वाद-विवाद आरम्भ किया। वहाँ जब दो चार शास्त्री एक साथ बोलने लगते तब मैं कोलाहल ऐसा कहता था । इसलिये आज तक वहां के लोग मुझे कोलाहल स्वामी कहते हैं । वहाँ चक्रांकितों के दस आदमी मुझे मारने को आये परन्तु उनसे बड़े संकट से बचा । फर्रूखाबाद से मैं कानपुर आया और कानपुर से प्रयाग गया। प्रयाग में मुझे मारने वाले मारने के लिये आये परन्तु एक माधवप्रसाद करके भद्रपुरुष था उसने मुझे बचाया । यह माधवप्रसाद गृहस्थी मनुष्य ईसाई धर्म स्वीकार करने वाला था और उसने सारे पंडितों को नोटिस दिये थे कि अपने आर्य धर्म के विषय में मेरा समाधान तीन महीने के भीतर करा दें अन्यथा समाधान न होने की अवस्था में मैं ईसाई धर्म स्वीकार कर लूँगा । मैंने आर्यधर्म के विषय में उसका समाधान कर दिया और वह ईसाई होने से बच गया ।

संवत् १९२६ वि०—प्रयाग से मैं रामनगर गया । काशी में—रामनगर के राजा के कहने पर काशी

www.thearyasamaj.org
के पंडितों से शास्त्रार्थ करने के लिए गया और उस वाद में प्रतिमा ऐसा शब्द वेदों में है या नहीं ऐसा विषय चला । प्रतिमा शब्द वेदों में है परन्तु उसका अर्थ माप है ऐसा मैंने सिद्ध करके दिखला दिया। वह शास्त्रार्थ और स्थान पर छप कर प्रसिद्ध हुआ है — वह सब पढ़कर देखें । इतिहास से ब्राह्मण ग्रन्थ ही ग्रहण करने चाहिये ऐसा भी वाद वहाँ चला था ।

काशी में चार बार आह्वान, वेदों में मूर्तिपूजन मिला हो तो लावें–कोई उत्तर नहीं मिला (संवत् १९२९ वि०) — गतवर्ष के भाद्रपद में मैं काशी में था और आज तक चार बार मैं काशी में गया और जिस-जिस समय जाता हूँ तब-तब किसी को वेदों में मूर्तिपूजन मिला हो तो लावे ऐसा नोटिस देता हूँ परन्तु आजतक कोई वचन नहीं निकाल सके । इस प्रकार उत्तर भारत के सारे भागों में मैंने भ्रमण किया है । आज दो वर्ष से कलकत्ता, लखनऊ, इलाहाबाद, कानपुर, जबलपुर आदि स्थानों में धर्मोपदेश मैंने बहुत से लोगों को किया और फर्रूखाबाद, काशी आदि स्थानों में आर्यविद्या सिखलाने के लिये तीन या चार पाठशालाएँ स्थापित कीं । उनके पढ़ाने वालों की धूर्तता के कारण जितना लाभ होना चाहिये वैसा नहीं हुआ । पिछले वर्ष मैं बम्बई आया और बम्बई में गुसाई जी महाराज के पक्ष का खंडन बहुत प्रकार से किया और बम्बई में आर्यसमाज की स्थापना की ।

समाप्त

।। ओ३म्।।

आर्य समाज कलकत्ता, १९, विधान सरणी, कोलकाता-६ की ओर से पं० वेद प्रकाश शास्त्री द्वारा बंगाल में आर्य समाज का प्रचार ।

१. २८-९-१६ गुरुकुल मालिग्राम में आर्य समाज मालिग्राम का सत्संग ।

२. २-१०-१६ आर्य समाज बड़ाबाजार में २०१७ का आर्य महासम्मेलन, महर्षि की पुस्तकों का प्रचारार्थ सस्ता संस्करण तथा कलकत्ता में पुस्तक मेला में प्रचार हेतु सांगठनिक बैठक ।

३. ६-१०-१६ श्री मन्मथनाथ राय, पश्चिम मालिग्राम महाशय की वाटिका पर यज्ञ और सत्संग ।

४. ९-१०-१६ आर्य समाज विष्णुबाड़ (तमलुक) जो कि ऐतिहासिक महत्व रखता है, एक सुविशाल आर्य समाज है, जिसके अन्दर ४/५ गांव के बहु संख्यक सज्जन सम्मिलित थे परन्तु सुदीर्घ २५/३० वर्ष से प्रचार न होने के कारण अन्तिम श्वास गिन रहा था, लगभग ५०/६० सज्जनों को जिनमें प्रोफेसर, शिक्षक, व्यवसायी तथा शिक्षित वर्ग थे, इकट्ठे करके यज्ञ, प्रवचन तथा वैदिक चर्चा, विचार-विमर्श से समाज को पुनरुज्जीवित करने का सफल प्रयास किया गया।

प्रेषक —

पं० वेदप्रकाश शास्त्री

www.thearyasamaj.org

द्रौपदी के पाँच पति नहीं थे

– परीक्षित मण्डल प्रेमी

महाभारत महाकाव्य भारत की पुरातन राष्ट्रीय संहिता है । यह भारतीय ज्ञान विज्ञान, धर्म, संस्कृति की अक्षय निधि है । महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास ने कुरु-पाण्डवों के चरित को निमित्त बनाकर जिस भारताख्यान की रचना की थी, वही नानाशास्त्रों के समुच्चय से महाभारत के रूप में इस समय उपलब्ध है । इस महाग्रन्थ के संबंध में मार्कण्डेय पुराण १/२/११ में कहा गया है – वेदव्यास ने इतिहास, पुराण की पाँचवी संहिता के रूप में वेदों का ही एक महागंभीर सरोवर महाभारत के रूप में विरचित किया है। कुरु-पाण्डवों की विस्तीर्ण कथा का जल इसमें भरा है । उस स्वच्छ जल में वैदिक और लौकिक आख्यानों के अनेक शतदल और सहस्रदल कमल खिले हैं । इसकी सुन्दर शब्दावली उस जल में क्रीड़ा करने वाले हंसों की मधुर ध्वनि है । ऐसा यह वह्वर्थशाली एवं श्रुतियों से विस्तार को प्राप्त हुआ महाभारत शास्त्र है । पुनः वायुपुराण १/४४/४५ में महाभारत की महिमा के संबंध में कहा गया है कि– ''महर्षि वेदव्यास ने वेदों के समुद्र को अपनी बुद्धिरूपी मथानी से मथकर ऐसे महाभारतरूपी चन्द्रमा को जन्म दिया, जिसके प्रकाश से यह सारा लोक प्रकाशित है ।''

मति मन्थानमाविद्य येनासौ श्रुतिसागरात् ।
प्रकाश जनितो लोके महाभारत चन्द्रमाः ।।

निःसन्देह महाभारत अत्यन्त महिमाशाली और गौरवमय ग्रंथ है । महर्षि वेदव्यास ने तीन वर्षों की कठिन परिश्रम से इस अमर ग्रंथ की रचना आज से पाँच हजार एक सौ एकावन वर्ष पूर्व की थी । महाभारत के अन्तःसाक्ष्य के आधार पर यह कहना युक्तियुक्त होगा कि महाभारत के वर्तमान स्वरूप का विस्तार तीन चरणों तथा तीन संस्करणों में हुआ । आरम्भ से कृष्ण द्वैपायन व्यास मुनि ने जिस ग्रंथ की सौ पर्वों में रचना की थी, उसका नाम जय था । महाभारत आदि पर्व २/१३ में लिखा हुआ है – ''जयो नामेतिहासोऽयम्''। दूसरी अवस्था में इसका नाम भारत पड़ा । इसमें उपाख्यानों का समावेश नहीं था । केवल युद्ध का विस्तृत वर्णन प्रधान विषय था, जो चौबीस हजार श्लोकों में निबद्ध था । उसी भारत को वैशम्पायन ने अर्जुन के प्रपौत्र जनमेजय को सर्पसत्र में पढ़कर सुनाया था । इस संबंध में महाभारत आदि पर्व १/६१ का निम्नलिखित प्रमाण द्रष्टव्य है –

चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम् ।
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यतेबुद्धैः।।

तत्पश्चात् लोमहर्षण के पुत्र सोती उग्रश्रवा ने उन सौ पर्वो को व्यवस्थित करके अठारह पर्वों में इस कथा को शौनक आदि ऋषियों को तीसरी बार सुनाया । इस प्रकार महाभारत के तीन वक्ताओं ने तीन श्रोताओं को इसे तीन बार सुनाया । इसका प्रथम वाचन तक्षशिला में हुआ था । तत्पश्चात् नैमिषारण्य में । इस क्रम में वक्ताओं और श्रोताओं के बीच में जो प्रश्नोत्तर हुए होंगे, इनके कारण मूल महाभारत में कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ होगा । इतना ही नहीं, समय-समय पर इसमें अन्य लोग भी वृद्धि करते रहे हैं । इस मूल ग्रंथ में समय-समय पर प्रक्षेप हुए हैं और नवीन अंश घुसते चले गए हैं । इस

www.thearyasamaj.org

संबंध में गरुड़ पुराण को निम्नलिखित प्रमाण ध्यातव्य है —

देत्याः सर्वे विप्र कुलेषु भूत्वा कलौयुगे भारत षट्सहस्त्रयाम् ।
निष्कास्य कंचिन्नव निर्मितानां निवेशनं तत्र कुर्वन्ति नित्यम् ।।

इस विषय में भोज रचित 'संजीवनी' नामक ग्रंथ का प्रमाण देते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थप्रकाश एकादश समुल्लास में स्पष्ट लिखा है — व्यासजी ने चार सहस्त्र, चार सौ और उनके शिष्यों ने पाँच सहस्त्र छह सौ श्लोक युक्त अर्थात् सब दश सहस्त्र श्लोकों के प्रमाण महाभारत बनाया था । वह महाराजा विक्रमादित्य के समय में बीस सहस्त्र और राजा भोज कहते हैं — मेरे पिताजी के समय में पचीस और मेरी आधी उमर में तीस सहस्त्र श्लोकयुक्त महाभारत की पुस्तक मिलती है । जो ऐसे ही बढ़ता चला गया तो महाभारत की पुस्तक एक ऊँट का बोझ हो जाएगा । इससे स्पष्ट होता है कि अठारह सर्गो में निबद्ध महाभारत जो आज उपलब्ध है, किसी एक व्यक्ति अथवा एक समय की रचना नहीं है । महाभारत में समय-समय पर प्रक्षेप हुए हैं । इस विषय में विश्वविश्रुत इतिहासकार प्रोफेसर काशीनाथ राजवाड़े ने Yaskas Nirukta Volume I में स्पष्ट लिखा है — The Present महाभारत is a corrupt and enlarged edition of the ancient महाभारत this ancient work has been dilated from time to time with all sorts of additions and has grown in proportion on that account. अर्थात् वर्तमान महाभारत प्राचीन महाभारत का विकृत और परिवर्धित संस्करण है । प्राचीन महाभारत के मूल स्वरूप में समय-समय पर अतिरिक्त संयोजन होते रहने के कारण ही आकार की दृष्टि से उसका इतना विस्तार हो गया है । यही कारण है कि वर्तमान समय में महाभारत में लगभग एक लाख श्लोक है ।

फलतः महाभारत में उत्तर भारतीय और दक्षिण भारतीय, दो प्रमुख पाठराप्रदाय (रिसेंशन्स) हैं । जिनमें विभिन्न पाण्डुलिपियों का समावेश है । विभिन्न पाण्डुलिपियों की श्लोक संख्या, अध्यायक्रम और संख्या, उपाख्यान, संनिवेश आदि में महान अन्तर पाया जाता है । जैसे उत्तर भारतीय पाठ में ८६६०० तथा दक्षिण भारतीय पाठ में ६५८४ श्लोक है । इनके अलावे उवाच में श्लोकों की संख्या ७०३२ है । इसी प्रकार भाण्डारकर प्राच्य शोधसंस्थान, पुणे द्वारा प्रकाशित महाभारत के संशोधित संस्करण में अठारह पर्व, अध्याय १९५६ और श्लोकों की संख्या ८३१३६ है । इन पाठों की तुलना के आधार पर परमहंस स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती द्वारा संपादित और गोविन्दराम हासानन्द, नई दिल्ली ६ द्वारा प्रकाशित महाभारत में अठारह पर्व, अध्याय ३९९ और श्लोकों की संख्या १५२०८ हैं । इस संस्करण में अश्लील कथाएँ, असंभव गप्पें, अलौकिक घटनाएँ और अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन बिलकुल नहीं है ।

सदियों से भारतीय समाज में यह मान्यता प्रचलित है कि सोमकवंश में उत्पन्न द्रुपदात्मजा द्रौपदी का विवाह पाँच पाण्डुपुत्रों से एक साथ संपन्न हुआ था । पुनः द्रौपदी के पाँच पति होने का कारण माँ कुन्ती का अनजाने में आशीर्वाद दे देना था । किन्तु यह तथ्य मूल महाभारत के विरुद्ध है और बेबुनियाद है । महाभारत में इस बात के बड़े स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं कि सती साध्वी द्रौपदी का विवाह केवल पाण्डु के ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिर से हुआ था । महाभारत के आदिपर्व में स्पष्ट प्रमाण है कि उदारधी राजा द्रुपद धर्मयज्ञ से उत्पन्न यज्ञसेनी का पाणिग्रहण शास्त्रानुसार एवं धर्मानुसार संपन्न करने की इच्छा प्रकट करते हुए कहते हैं

www.thearyasamaj.org

कि हे युधिष्ठिर ! आप विधिपूर्वक मेरी सुपुत्री द्रौपदी का पाणिग्रहण करें अथवा अपने भाइयो में से जिसके साथ चाहें, उसी के साथ द्रौपदी का विवाह करने की आज्ञा दे । तब युधिष्ठिर ने कहा — राजन् ! विवाह तो मेरे साथ ही करना होगा । इसका प्रमाण महाभारत आदिपर्व १९४/२१ में द्रष्टव्य है —

तमब्रवीत् ततो राजा धर्मात्मानं च युधिष्ठिरः।

ममापि दारसंबन्धः कार्यस्तावर विशाम्पते ।।

तब द्रुपद ने कहा कि आप ही विधिपूर्वक मेरी पुत्री का पाणिग्रहण करें । इस संबंध में महाभारत आदिपर्व १९४/२२ पृष्ठसंख्या ५६० में प्रमाण है —

भवान् वा विधिवत् पाणिं गृह्णातु दुहितुर्मम।

यस्य वा मन्यसे वीर तस्य कृष्णामुपदिव।।

आगे कहा गया है कि द्रुपद के ऐसा कहने पर वेदों के पारंगत विद्वान् पुरोहित महर्षि धौम्य ने वेदी पर प्रज्वलित अग्नि की स्थापना करके उसमें मंत्रों द्वारा आहुति दी और केवल युधिष्ठिर को बुलाकर कृष्णा के साथ उनका गठबंधन किया । इस संबंध में महाभारत का आदिपर्व अध्याय १९७/११ में प्रमाण द्रष्टव्य है —

ततः समाधाय स वेद पारगो जुहाव मंत्रैर्ज्वलितं हुताशनम् ।

युधिष्ठिरं चाप्युपनीय मंत्रविन्नियोजमास सहैव कृष्णाया ।।

इससे स्पष्ट होता है कि द्रौपदी को केवल एक ही पति युधिष्ठिर थे । यद्यपि स्वयंवर की शर्त लक्ष्यभेदन कर अर्जुन ने पूर्ण की थी । किन्तु वैदिक परंपरा के अनुसार द्रौपदी का पाणिग्रहण संस्कार युधिष्ठिर के साथ संपन्न हुआ था । अतः द्रौपदी पाँचों पाण्डवों की पत्नी नहीं थी । द्रौपदी को पाँचो पाण्डवों की पत्नी बनाने वाला सारा प्रकरण महाभारत में पीछे से मिलाया गया है ।

बड़ी हैरानी की बात है कि इन पुष्ट प्रमाणें के बाद भी द्रौपदी को पाँच पाण्डवों की पत्नी कहा जाता है । जबकि भीम की पत्नी हिडिम्बा थी, इसकी चर्चा महाभारत में हुई है । इसी तरह अर्जुन की पत्नी सुभद्रा थी । इसके अतिरिक्त अर्जुन की दो अन्य संरक्षिताएँ चित्रांगदा और उलुपी का वर्णन भी महाभारत में मिलता है । नकुल का विवाह चेदिराज की कन्या करेणुमति से हुआ था । इसी तरह सहदेव का विवाह पुष्पा के साथ संपन्न हुआ था । फिर क्या यह कहना युक्तिसंगत और उचित है कि सती साध्वी द्रौपदी के पाँच पति थे । जबकि ऋग्वेद १०/८५/४२ में स्पष्ट कहा गया है कि एक काल में एक पति केवल एक ही पत्नी रख सकता है ।

इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।

क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ।।

उपर्युक्त मंत्र में स्त, यौष्ट, अश्नुत, क्रीडन्तौ, मोदमानौ ये सारे शब्द द्विवचनान्त में हैं, जो स्पष्ट बतला रहे हैं कि पति और पत्नी ये दो व्यक्ति ही हैं । अन्यथा यह द्विवचन व्यर्थ हो जाएगा । इससे स्पष्ट होता है कि द्रौपदी के पाँच पति होना, वेदमत, लोकमत और साधुमत के विरुद्ध है ।

हिंदी अध्यापक, संत फ्रांसिस उच्च विद्यालय
मो० ९१६२२०८००५ पोड़ैयाहाट, जिला-गोड्डा

www.thearyasamaj.org

॥ ओ३म् ॥

आज के विकृत संस्कार

संतति के उत्कृष्टता के लिये जन्म दाता उत्तरदायी

एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण

– पं० उम्मेद सिंह विशारद

आज भारत की शिक्षा पद्धति का उद्देश्य भौतिक है । शिक्षा से मानव में सत्य व आध्यात्म का संस्कार बनता है, आज नैतिक शिक्षा का आधार संसार खो चुका है । जब युवा २५ वर्ष पढ़ लिखकर व्यवसाय में उतरता है तो कोई डाक्टर, इन्जीनियर, प्रोफेसर, वकील, साइन्टिस्ट, आदि-आदि बन जाता है । किन्तु नैतिक व आध्यात्मिक संस्कार न होने के कारण वह अपने-अपने व्यवसाय में भ्रष्टाचार करना शुरू कर देता है, और सारा सामाजिक वातावरण दूषित हो जाता है, और मानवता की जगह दानवता पनपने लगती है ।

आज आवश्यकता है बच्चों को शुरू से ही वैदिक, सात्विक संस्कारों की शिक्षा दी जाये, ईमानदारी और सदाचार का पाठ पढ़ाया जाये ।

मेरे अनुभव के आधार पर दूसरी सामाजिक व्यवस्था व संस्कारों का कारण है । झूठी मर्यादा का जाति वर्ग का संस्कार । हिन्दू-मुसलमान-सिख-ईसाई-यहूदी-अंग्रेज के घर जन्म लेता है तो माँ के पेट से ही उसमें कथित धर्म के संस्कारों का समावेश हो जाता है और पैदा होने पर से ही उस पर वही मान्यता धर्म संस्कारों को थोपा जाता है, और वह जीवन भर वही भाषा व धर्ममत संस्कार मानता है, और उसी मान्यता को अपनी मर्यादा व हठधर्मी का व्यवहार करता है । परिणाम स्वरूप अलग-अलग धर्म संस्कारों के कारण कत्ले आम, मारपीट, मानवों में अत्याचार, घोर अन्धविश्वासों की मान्यताएँ मान कर संसार में अशान्ति फैली हुई है और सारा संसार बारूद के ढेर पर बैठा है ।

सुसन्ति की उपयोगिता सभी समझते है पर उसके लिये माता पिता बनने वाले अपना स्तर ऊँचा उठाने का प्रयत्न नहीं करते । वैज्ञानिकों का इस सन्दर्भ में जीन्स को उत्तरदायी बताना है, और उनका मानसिकता सत्य और संस्कारित होना आवश्यक है ।

उत्तम भविष्य के लिये सुप्रजनन भी आवश्यक

आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द जी समाज में आदर्श समाज चाहते थे इसीलिये उन्होंने मानवों के उत्तम संस्कारों पर बल दिया । उन्होंने संस्कार विधि बना कर सोलह संस्कारों की आज्ञा दी जो जन्म से मृत्यु तक एक आदर्श समाज दे सकते हैं । महर्षि दयानन्द जी का सोचना था कि देव मानवों का निर्माण सुगढ़ सुसंस्कारी दम्पत्ति ही कर पाते हैं । उच्च संस्कारों अर्थात् वेदानुकूल संस्कारों के बिना सुसंगति को जन्म देना सम्पन्न नहीं है ।

www.thearyasamaj.org

उच्च संस्कारों की नई पीढ़ी ही परिष्कृत बीज कोषों से उत्तम संतति जनेगी –

स्वयं विद्वान् बनने के लिये अध्ययन, अभ्यास, स्वाध्याय, और कला कौशल की प्रवीणता के लिये सुसंस्कारवान बनना आवश्यक है । प्रजनन का उत्तरदायित्व वहन करने के लिये भूतकाल में मात्र शुक्राणु और डिम्बकीट के सम्मिलन को श्रेय दिया जाता रहा है । पर अब उसके भीतरी अति सूक्ष्म घटकों का पता चला है। जिन्हें गुणसूत्र कहा जाता है । इन्हें इलेक्ट्रान, प्रोटान, न्यूट्रान, पाजिटॉन आदि नामों से जाना जाता है। ठीक इसी प्रकार अब प्रजनन घटक शुक्राणु डिम्बाणु के भीतर पाये जाने वाले सूक्ष्म गुण सूत्र न केवल प्रजनन के वरन वंश परम्परा के साथ लिपटी हुई अनेकानेक क्षमताओं एवं विशेषताओं को हस्तान्तरित करने वाले माने गये हैं ।

व्यक्तित्व मात्र वंश परम्परा से नहीं बनता

शरीर के बाहरी अवयव तो जाने पहचाने हैं, पर उनके भीतर छोटे-छोटे अरबों खरबों जीव कोशों की श्रृंखला विद्यमान है । ये सभी अपने-अपने निर्धारित कार्यों में लगे रहते हैं । इन कोशाओं के भीतर एक विशाल भण्डार विद्यमान है । इनके भीतर गुणसूत्रों के ऐसे घटक रहते हैं जो प्रजनन प्रक्रिया में काम आते हैं । नर-नारी दोनों में यह घटक रहते हैं । दोनों पक्ष आपस में गुंथ कर एक नई सृष्टि का आरम्भ करते हैं । भ्रूण की स्थापना इसी आधार पर होती है । वैज्ञानिकों के अनुसार शिशुओं का जन्म और उनकी विशेषता इन्हीं छोटे-छोटे इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप से देखे जाने वाले घटकों की विकसित प्रक्रिया पर निर्भर है ।

विलासिता हमें अपंग करके छोड़ेगी ।

वर्तमान अति भौतिक विलसिता को देख कर यह अहसास होता है कि कुछ हजार वर्ष बाद तो सम्भवतः एक भी बच्चा शुद्ध जन्म नहीं लेगा, उनमें से अधिकांश कोई न कोई रोग लेकर जन्मेगें कई तो कोई ऐसे भी होंगे जो आज के वीर्य रोगों से रोगी मनुष्य की संतान होने के कारण नपुंसक भी होंगे । इसलिये कोई सन्देह नहीं आने वाली पीढ़ी अपने अंग खो दे । इसका कारण मानवीय मस्तिष्क में धन क्षेत्र का निरन्तर विस्तार । आज मनुष्य चलता तो बहुत है पर बैठे-बैठे चलता है । रेल, मोटरें, वायुयान, चलाते हैं । खाता बहुत है जीभ खिलाती है सुनता बहुत है रेल, मोटरों की गड़गड़ाहट सुननी पड़ती है । इससे मनुष्य को शान्ति देने वाले हारमोन्स का स्राव होता जा रहा है । विचार शक्ति प्रौढ़ होती जायेगी और इन्द्रियों की क्षमता गिरती जायेगी जिससे भावी संतति भी अपंग एवं संस्कार हीन ही होती जायेगी ।

परिवेश मनुष्य को भी बदल देता है

मनुष्य पारदर्शी कांच की तरह है, उसी रंग का दिखने लगता है, जिस तरह के रंग के सम्पर्क में आता है तथा वह परिस्थिति के स्तर का बन जाता है । जहाँ ऊँचे उठाने वाली परिस्थितियों में रह कर व्यक्ति-समुन्नत बनता है, वहाँ निष्कृष्ट परिस्थितियाँ उसे निरन्तर गिराती चली जाती है । इसलिये मनुष्य को प्रकृति के अनुकूल व आत्मोत्थान के परिवेश में रहना होगा ।

www.thearyasamaj.org

वातावरण हमें स्वयं ही बनाना होगा

व्यक्ति निर्माण से लेकर समाज निर्माण तक के लिये जहाँ व्यक्तिगत जीवन को आदर्श वादिता के सहारे प्रखर प्रतिभावान बनाने की आवश्यकता है और ऐसा वातावरण तैयार किया जाये, जिसमें ईश्वरीय व्यवस्थानुसार वैदिक संस्कार, व्यवहार, आचार और आदर्श जीवन पद्धति अपनाई जाये ।

वंशानुक्रम की सुप्रजनन का मूल आधार

माता-पिता की शारीरिक और मानसिक संरचना के अनुरूप सन्तान का स्वास्थ्य और बुद्धि का विकास होता है । इस बात का ध्यान रखना आवश्यक हो जाता है कि उद्‌गम स्रोत शुक्राणु का स्तर क्या और कैसा है ? यह बच्चों के शरीर और मन के निर्माण व्यक्तित्व, भविष्य और चरित्र की सम्भावना पर पूरी तरह लागू होता है ।

हम सुधरेंगे तो बच्चे सुधरेंगे

आज के हमारे कुसंस्कार व सुसंस्कार कल के बच्चे में वही संस्कार आते हैं । संस्कारों की शक्ति इतनी बलवान होती है कि वह आने वाली पीढ़ी के मन ही नहीं शरीरों को भी प्रभावित कर सकती है। इसलिए हमें गम्भीरता से विचार करना पड़ेगा कि भावी पीढ़ी संतति दिनों दिन संस्कारहीन उद्दण्ड और स्वेच्छाचारी बन रही है क्या उसका कारण हम तो नहीं है ।

प्रत्येक पति पत्नी उच्च आदर्श संस्कार वैज्ञानिक और वैदिक सिद्धान्तों पर धार्मिक मान्यताएँ नियमित जीवन दिनचर्या, सात्विक आहार नियमित आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय, नियमित यौगिक क्रियायें, अपना कर भविष्य के लिये आदर्श संतति दे सकते हैं ।

अतः भावी पीढ़ी आदर्श वंश परम्परा का संस्कार माता-पिता से ही प्रारम्भ होता है ।

वैदिक प्रचारक

मो० ९४११५१२०१९ गढ़निवास मोहकमपुर देहरादून

(पृष्ठ २५ का शेषांश)

का स्वास्थ्य एवं यश बढ़ता है, तभी सब प्राणी सुख पाते हैं । काल में ही परमात्मा के नियम से भूत और भविष्यत् निहित हैं ।

''कालो भूतिमसृजत काले तपति सूर्यः।
काले ह विश्वा भूतानि काले चक्षुर्वि पश्यति ।।''

— अथर्ववेद, काण्ड-१९, सूक्त-५३, मन्त्र-६।।

अर्थात् ''काल'' (समय) ने ऐश्वर्य को उत्पन्न किया है, काल में सूर्य तपता है, काल में ही सब सत्तायें हैं, काल में आँख विविध प्रकार देखती है । ''काल'' के सादर निरन्तर सेवन से मनुष्य ज्ञानी ऋषि होकर और सब व्यवहारों तथा समाजों में प्रतिष्ठा पाकर, परम गति को प्राप्त कर आनन्द भोगते हैं ।

१९-सी, सरत बोस रोड

मो० ९८३६८४१०५१ कोलकाता-७०००२०

www.thearyasamaj.org

सूचना

आर्य समाज सान्ताक्रुज वर्ष - २०१७ के लिए निम्नलिखित पुरस्कारों हेतु प्रविष्टियाँ आमंत्रित की जाती हैं।

१. वेद - वेदांग पुरस्कार, २. वेदोपदेशक पुरस्कार, ३. श्री मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार, ४. श्रीमती लीलावती महाशय ''आर्य महिला पुरस्कार'', ५. पं० युधिष्ठिर मीमांसक स्मृति पुरस्कार, ६. श्रीमती कृष्णा गान्धी आर्य युवक पुरस्कार, ७. श्री राजकुमार कोहली वरिष्ठ विद्वान् पुरस्कार, ८. श्रीमती प्रेमलता सहगल युवा महिला पुरस्कार, ९. श्रीमती भागीदेवी छाबरिया गुरुकुल सहायता पुरस्कार, १०. श्री झाऊलाल शर्मा गुरुकुल सहायता पुरस्कार, ११. श्रीमती शिवराजवती आर्या ''बाल पुरस्कार'', १२. श्री हरभगवानदास गांधी ''मेधावी छात्र पुरस्कार'', १३. स्व० आचार्य भद्रसेन युवा वैदिक विद्वान् पुरस्कार, १४. स्व० नारायणदास हासानन्दानी विशिष्ट वेदांग पुरस्कार, १५. कैप्टन देवरत्न आर्य संगठनवीर पुरस्कार।

आर्य समाज सान्ताक्रुज द्वारा उपरोक्त पुरस्कारों हेतु प्रविष्टियां आमन्त्रित की जाती है।

विशेष :- दिनांक ३१.१०.२०१६ तक प्रविष्टियाँ आर्य समाज सान्ताक्रुज के कार्यालय में पहुँच जानी चाहिये।

– संगीत आर्य
(संयोजक - पुरस्कार समिति)

आर्य समाज सान्ताक्रुज में वेद प्रचार समारोह सम्पन्न

– संगीत आर्य (महामन्त्री)

आर्य समाज सान्ताक्रुज (प०) मुम्बई द्वारा शुक्रवार दिनांक २६ अगस्त से रविवार दिनांक २८ अगस्त २०१६ तक आर्य समाज सान्ताक्रुज के वृहद सभागार में वेद प्रचार समारोह उत्साहपूर्वक मनाया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन प्रातः ८.०० से १०.०० बजे तक ''ऋग्वेद यज्ञ'' का आयोजन किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा एवं वक्ता डॉ० सोमदेव शास्त्री जी (मुम्बई) थे। यज्ञ में वेदपाठी पं० नामदेव आर्य, पं० विनोद कुमार शास्त्री, पं० नरेन्द्र शास्त्री, पं० प्रभारंजन पाठक एवं पं० नचिकेता शास्त्री थे। रात्रि कालीनसत्र में ७.४५ से ९.३० बजे तक प्रवचन डॉ० सोमदेव शास्त्री जी एवं भजनोपदेश श्रीमती स्नेह पुरी, श्री प्रभाकर शर्मा जी के होते रहे।

वेद प्रचार के शुभावसर पर द्विदिवसीय पूर्ण रहिवासी शिविर रखा गया। उसके अध्यक्ष व संचालनकर्ता डॉ० सोमदेव शास्त्री जी थे।

www.thearyasamaj.org

माता अदीन व कर्मशील बनावें

– डॉ० अशोक आर्य

अदिति के सम्बंध में वेद ने क्या वर्णन किया है ? इसका उत्तर वेद ने ही दिया है कि वह स्त्री जिसने सब प्रकार की शिक्षाओं का यथावत ग्रहण किया हो अर्थात् वह वेद आदि शास्त्रों का स्वाध्याय कर पूर्ण विदुषी बनकर अपने इन गुणों को अपनी संतान में बांटने वाली हो । इस सम्बन्ध में वेद में अनेक मन्त्र दिए हैं । आओ यहाँ हम ऋग्वेद के एक अन्य मन्त्र के उपदेशों को इस सम्बंध में समझने का प्रयास करें :-

अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ।। ऋग्वेद ८.१८.६।।

मन्त्र संक्षेप में हमें उपदेश करते हुए कह रहा है कि माता सदावृधा होती है । माता सबको सदा बढ़ाने वाली होती है । इसलिए वह हमें भी आगे को बढ़ाती रहे किन्तु किस प्रकार आगे को बढ़ावे, हमारे कौन-कौन से गुणों को बढ़ाने का कार्य करे ? इस सम्बंध में मन्त्र की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि वह हमें शारीरिक, मानसिक तथा, आत्मिक रूप में आगे बढ़ाने का कार्य माता कराती हैं ।

१. शारीरिक उन्नति :-

मानव जीवन की उन्नति के मुख्य रूप में तीन प्रकार माने गए हैं । इन तीन विधियों में से प्रथम का नाम है शारीरिक उन्नति । इस प्रकार की उन्नति सब प्रकार की उन्नतियों में से मुख्य उन्नति माना जा सकता है क्योंकि जिस व्यक्ति का शरीर पुष्ट नहीं है, वह पूर्णतया स्वस्थ नहीं है, वह अपने जीवन में कुछ भी नहीं कर सकता । शारीरिक दुर्बलता के कारण सदा रुआंसा रहते हुए शत्रु से सदा भयभीत, अध्यापक की मार से भयभीत, माता के व्यवहार से भयभीत, भाव यह कि अपने प्रत्येक व्यवहार और प्रत्येक क्रियाकलाप में सदा भयभीत सा ही, डरता सा ही बना रहेगा । इस प्रकार का व्यक्ति न तो अपनी ही उन्नति कर सकता है और न ही अन्यों की उन्नति में सहायक हो सकता है । इसलिए मंत्र का उपदेश है कि माता सदा यह प्रयत्न करती है कि उसकी संतान सदा पुष्ट हो तथा वह उसे पुष्ट बनाने के वह सब उपाय भी करती है, जो ऋग्वेद के अनेक सूक्तों के अतिरिक्त अन्यत्र भी वेद के विभिन्न संदर्भों में प्राप्त होते हैं ।

२. मानसिक उन्नति :-

मन मानव मात्र की शक्ति व दुर्बलता का केंद्र होता है । मन स्वस्थ है तो सदा प्रगति के ही उपाय सोचता है किन्तु मन के शिथिल होने, रोगाणु होने से यह मानव को अवन्ती के गर्त में धकेल देता है। एक व्यक्ति के पास अत्यंत उन्नत शस्त्र होते हुए भी मानसिक कमजोरी के कारण वह अपने से कमजोर शत्रु से भी पराजित हो जाता है । माता जब अपनी संतान का निर्माण करने का कार्य कर रही होती है तो मुख्य रूप से वह अपने बालक के मन को दृढ़ता देने का कार्य करती है ताकि वह कभी भी किसी भी दशा में मानसिक संताप का कारण बन कर प्रगति के मार्ग पर बाधा न बन जावे ।

www.thearyasamaj.org

३. आत्मिक उन्नति :-

आत्मिक उन्नति तो मानव जीवन का आधार ही है। जो उन्नति हम आत्मा के माध्यम से कर सकते हैं, उसे आत्मा कहते हैं। मानव के शरीर में जब तक आत्मा है, तब तक ही वह मानव है, ज्यों ही आत्मा शरीर से अलग हो जाती है त्यों ही यह शरीर एक मिट्टी के ढेले के समान हो जाता है। हमारे परिजन तब तक ही इस शरीर को अपने साथ रखते हैं, जब तक इसमें आत्मा है, ज्यों ही आत्मा इस शरीर से अलग हो जाती है, त्यों ही यह शरीर हमारे परिजनों के किसी उपयोग का नहीं रह जाता तथा वह शीघ्र ही इसे अपने से दूर करने के लिए उपाय करते हुए इस शरीर का अंतिम संस्कार करना चाहते हैं।

इससे स्पष्ट है कि आत्मा में कुछ विशेषताएँ हैं, जिसके कारण परिजन इस आत्मा से युक्त शरीर की ही सेवा करते हैं, आत्मा रहित शरीर को अपने आस-पास देखना भी पसंद नहीं करते। हमारे शरीर में जो आत्मा है, वह हमारे बहुत से संस्कार विगत जन्मों से लेकर आती है तथा बहुत से संस्कार अपने वर्तमान जन्म के संचित संस्कारों से भी प्राप्त करती है। आत्मा के पास अच्छे कर्मों का भण्डार अधिक है तो वह तत्काल रूप में अच्छे कर्मों का फल पाते हुए अच्छे काम करती है। यदि आत्मा के पास कुकर्मों की निधि अधिक है तो वह कुकर्मों के करने के लिए तत्काल रूप से अग्रसर होती है। माता यह प्रयास करती है कि उसकी संतानें अच्छे कर्म करते हुए अपने कर्मों के भण्डार में इनको स्थान देवें। जब अच्छे कर्म अधिक होंगे तो उनका फल भी इन्हीं कर्मों की अपेक्षा पहले मिलने लगेगा और बुरे कर्मों का फल कुछ समय के लिए दूर हो जायेगा। इसलिए अच्छे कर्मों का आधिक्य बनाने का मात्र सदा प्रयास करती है।

मन्त्र कहता है कि माता जहां हमारी शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक उन्नति के उपाय करने वाली हो वहाँ हमारी माता अदीन, पाप रहित व स्वस्थ हो। इस प्रकार की माता हमें पाप कर्म करने से सदा बचाती रहे। हम जानते हैं कि कोई भी माता अपनी संतानों को कभी भी पाप मार्ग पर चलते नहीं देखना चाहती। वह अनेक उपाय करती है कि उसकी संतान पापाचरण से सदा दूर रहे। वह अपनी सन्तानों को सदा उत्तम मार्ग पर चलते हुए उत्तम कर्मों का संकलन करने की प्रेरणा देती है ताकि उसमें उत्तम कर्म बढ़ जावें तथा इनका फल भी शीघ्र ही मिलने लगे।

इस प्रकार मन्त्र यह बात स्पष्ट करता है कि माताओं का कर्तव्य है कि वह अपनी संतानों को सदा सब प्रकार से उन्नत बनाने वाली हो, उन्हें पापों से बचाते हुए निष्पाप बनाने वाली हो तथा अपनी संतानों को सर्वथा सब प्रकार से पवित्र बनाने वाली हो।

१०४ शिप्रा अपार्टमेंट,
कौशाम्बी-२०१०१०
गाजियाबाद (उ०प्र०)
मो० ०९७१८५२८०६८

—०—

www.thearyasamaj.org

शिक्षा

– योगेन्द्र दम्माणी

जब से मैंने क, ख, ग, घ सीखा है तब से मैं यह सुनता आया हूँ कि भारत एक कृषि प्रधान देश है । यह शायद ठीक भी है । शायद शब्द का व्यवहार इसलिए कर रहा हूँ क्योंकि मेरा यह सौभाग्य कम हो पाया कि उस प्रधानता को मैं देख सकूँ । इतने बड़े देश में सब तरह के कार्य होते हैं और किसी एक को कम या अधिक रूप में देखना उचित भी नहीं । हर एक से कुछ न कुछ सीखा जा सकता है। जैसे कृषि को ही लें । खेत खलिहानों में हम पाते हैं कि बच्चे अपने माता-पिता के साथ कृषि का कार्य करते हुए बड़े होते हैं उन्हें कृषि सिखाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती । बहुत कम अक्षरी शिक्षा में भी ये लोग अपना जीवन-निर्वाह कर लेते थे, अब भी कर लेते हैं । कुछ ऐसा माहौल बनाया या बिगाड़ा गया कि अक्षरी शिक्षा का भूत इन पर भी सवार कराया जाने लगा और अब वो आत्महत्या करते हुए पाए जा रहे हैं । (कारण कुछ और भी हो सकते हैं ।) हमारे यहाँ शिक्षा का अर्थ सिर्फ अक्षरी शिक्षा के ज्ञान को ही माना जाने लगा । शिक्षा का मतलब ABCD ही हो गया । लोहार के बेटे को यह बताने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी कि लोहे को पीटा कैसे जाता है, यह तो वह परिवार के साथ काम कर स्वयं ही सीख जाता था । इसी तरह बुनकर, बढ़ई या और कोई भी अन्य हाथ से काम करने वालें के लिए भी यही बात लागू थी । भारत सोने का देश था क्योंकि सामान्य ज्ञान और हुनर की वजह से लोग अपने सीमित दायरे में रहते संचय करते और जीवन खुशी से व्यतीत करते थे । आज सब तरफ त्राहि-त्राहि हो रही है । हुनर की शिक्षा पर फिर से बल दिया जा रहा है । क्योंकि हम पहले गलत दिशा में चलते हैं और फिर सुधार के कार्यक्रम लागू करते हैं । जब बच्चे अपने या अपने आसपास के लोगों के साथ जीविकोपार्जन की शिक्षा लेते थे तब उनको हमारे तथाकथित सभ्यसमाज ने बाल मजदूरी का नाम दे दिया । इस दिशा में कार्य करने वालों की मन्शा अच्छी थी कि नहीं, उनके पास ऐसे कार्यों को करने या करवाने के पीछे किनका-किनका या किसका हाथ था, है यह तो इतिहास बतायेगा परन्तु यह सत्य है इसी एक मुद्दे ने इस देश से हुनर रूपी स्वर्णिम भारत को हमसे छीन लिया । अक्षरी शिक्षा के नाम पर हजारों स्कूल और कॉलेज खोले गये । हर चीज से कुछ न कुछ लाभ होता ही होगा लेकिन इनकी हानि भी अब नजर आने लगी है और इस इन्टरनेट के जमाने में जब सब कुछ आनलॉइन है तब तो अब के अध-पढ़े युवक-युवतियाँ तो अधर में ही हैं । सारा काम अब प्लास्टिक मनी कर देगी। किसी को किसी की आवश्यकता नहीं । सारे बाजार बन्द । घर से निकलना बन्द । यह आधुनिकता की हद है । सुना है कि जापान का बच्चा बचपन से ही छोटी-मोटी मोटर या अन्य यन्त्र बना लेता है क्योंकि वह बचपन से इन चीजों को करता है । (जिसे हम चाइल्ड-लेबर कहते हैं ।) उसे अंग्रेजी सीखने के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ता वह तो अपना समय हुनर विकसित करने में लगाता है । चीनी आज किसी का मुहताज नहीं क्योंकि हर आदमी की चाहत कम है हर हाथ हुनर का हाथ है और इस कारण

www.thearyasamaj.org
उन्हें कम लागत पर सामान विकसित करना आ गया और इसलिए वे पूरे विश्व में छाते जा रहे हैं ।

मैं अभी कुछ दिन पहले अमेरिका में था । वहाँ के मूल लोगों को अपनी भाषा के अलावा कोई और भाषा आती ही नहीं । वह चाहे अंग्रेजी हो या स्पेनिश । वहाँ भी बचपन से बच्चे काम करते देखे जा सकते हैं । चाइल्ड-लेबर का वहाँ कोई एतराज नहीं । क्योंकि अल्प शिक्षा पर भी वो अपना जीवन बड़े आराम से व्यतीत कर लेते हैं । दुनिया के किसी अन्य कोने में क्या हो रहा है या नहीं यह जानकारी उन्हें हो या न हों किन्तु अपने कार्य में वे दक्ष हैं और इसका एकमात्र कारण है कि बचपन से खेलते खेलते हुए वे पा लेते हैं अपने जीवन यापन की जानकारी में प्रगाढ़ता । यह नहीं है कि भारत पहले ऐसा ही था । हमारा अध्यात्म तो उनसे कई गुना आगे है किन्तु जब अपने ही घर को आग लगे अपने चिराग से तो कोई क्या करे । हमने आध्यात्म की शिक्षा बिल्कुल छोड़ दी । चार आश्रमों के आधार पर २५ वर्षों तक शिक्षा तत्पश्चात् गृहस्थ, वानप्रस्थ और फिर संन्यास । यहाँ शिक्षा का गूढ़ अर्थ था, अक्षरी शिक्षा के साथ-साथ जिनका जो कार्य था वह माता-पिता अपने बच्चें को वही ज्ञान, या उसके लगाव वाला ज्ञान देते देते उसे इतना दक्ष बना देते थे कि वह गृहस्थ का भार बड़े आराम से उठा सकता था। यदि इस २५ वर्ष की अवधि को सब अपनाते तो कोई बेरोजगारी नहीं होती । पचास पर व्यक्ति समाज सेवा में लगते और अन्तिम पच्चीस पूरे विश्व के साथ-साथ अध्यात्म के लिए समर्पित होता । गृहस्थ इसका (समस्त आश्रमियों का) पूरा भार उठाता था । आज रिटायर करना पड़ता है, होते नहीं हैं यह नहीं सोचते कि अगर आप रिटायर नहीं होंगे तो एक युवक का भाग्य आप छीन रहे हैं और इसका प्रतिफल या तो रोगों में या अवसाद आदि में आखिर तो मिलेगा ही । यह पहला या आखिरी जीवन नहीं, इसका कारण ये अक्षरी शिक्षा का तांडव है जो कि जानबूझकर हमारे समाज को विघटित करने एवं कराने के उद्देश्य से विदेशी षडयंत्रों के रूप में हमारे अपनों द्वारा कराया जाता है । आप कोई भी इस तरह के कार्य में जिससे आपकी संस्कृति बिखरती है लग जाइए आप को कोई न कोई विदेशी पुरस्कार तो पुकार ही लेगा ।

शिक्षा पद्धति को सही तरह ले जाना है तो इस मानसिकता से हमें हटना होगा कि चाइल्ड लेबर कुछ होता है । हम अगर लेबर से मुंह मोड़ने लगे तो सिर्फ और सिर्फ बेरोजगार ही दिखेगा । हर अक्षरी शिक्षा के पण्डित को भी हाथ के हुनर जानने वाले की आवश्यकता अवश्य पड़ती है । तो उसकी कीमत ज्यादा और हुनर वाले की कीमत क्रम क्यों ? यदि इस कीमत के फासले को कम कर दिया जाय तो फिर से लोग हुनर सीखने के लिए प्रेरित हो जाएंगे । शिक्षा वह भी है और यह भी — यह मूलमंत्र है। सिर्फ स्कूलों, कॉलेजों की डिग्री काम करने का ठप्पा का ही महत्व तो नहीं होना चाहिए । इन डिग्री देने वालों को पहली डिग्री तो किसी बिना डिग्री वाले ने ही दी होगी । इसमें जब कोई सन्देह नहीं तो फिर उसी से हम बैर क्यों कर बैठे । अंग्रेजी शिक्षा ने क्लर्क तो बहुत उत्पन्न कर दिये जो नौकरियाँ करने के लिए तत्पर हैं । महीने का मेहनताना मिल जाय बस । कोई यह भी नहीं सोचता कि हम उतना नौकरी देने वाले को दे पा रहे हैं भी कि नहीं । किसी क्लर्क को आप रख कर देखिए । वह काम ठीक से करे

www.thearyasamaj.org

या न करे, तनख्वाह तो उसे सही समय पर चाहिए ही । हमने भी ऐसे अनगिनत कानून बना डाले कि नौकरी देने वाला ही व्यवहारिक रूप में मानो सबसे बड़ा गुनाहगार हो । इस मानसिकता से हटे बिना हम विदेशी शिकन्जे में फँसे रहेंगे । हम कमजोर रहें, अपनी संस्कृति से दूर रहें — यही उनकी नीति रही है । आज व्यवसाय वाले के सामने अनगिनत व्यवधान डाले जाते हैं । जहाँ अक्षरी शिक्षानीति के कारण हजारों लोग बेरोजगार हैं, (जिसमें उनका दोष नहीं) वहाँ इतने कानून कि कुछ शुरुआत के पहले आप उन कानूनों को कैसे पालन करेंगे यही दिमाग खराब कर दे । इस शिक्षानीति ने हमें या तो सिर्फ राईट या सिर्फ लेफ्ट कर दिया है । समन्वय का इसमें अवसर ही नहीं है । कारोबार करने वाले और उसमें काम करने वाले दोनों का सही समन्वय भी तो आवश्यक है । किसी कारखाने के बन्द होने में दोनों पक्ष कहीं न कहीं जिम्मेदार होते हैं । बंगाल तो इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है । यहाँ काम करने वाला समय के बाद पहुँचता है और जल्दी जाने की चेष्टा करता है । पैसे देने वाला भी जितना देर से व जितना कम दे सके — यही सोचता है । वह भी क्या करे ? उधार ने जीवन तबाह कर रखा है । सब कुछ इतना उलट-पुलट क्यों हो रहा है इसे विचारने की आवश्यकता है । गूढ़ता में खोजने पर गलत शिक्षा, आध्यात्म रहित शिक्षा, हुनर रहित शिक्षा, अत्यधिक भौतिकता, कानून की गलत धाराएँ चारों ओर यही सब नजर आएँगे । हुनर की शिक्षा के स्कूल खोलिए, प्रेक्टिकल काम करने का मौका विकसित कराइये बचपन से ही । बच्चों को बढ़ई, लोहार, कुम्हार राजमिस्त्री, बैद्य, मैकैनिक, कृषि आदि की डिग्री भी दीजिए । जो अक्षर ज्ञान चाहे उनके लिए वो और जो ये सब चाहें उनको ये । बच्चे सही शिक्षा प्राप्त कर सकें इसके उपाय करने की नितान्त आवश्यकता है । सिर्फ हमारी आज की कथित अक्षरी शिक्षा से समन्वय नहीं होगा । अति सर्वत्र वर्जयेत !

— लेखक पेशे से चाटर्ड एकाउन्टेंट हैं

e-mail : ycrdamani@gmail.com

गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार की घोषणा

राधेमोहन, प्रधान, गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति, सूचित करते हैं कि वर्ष २०१५-१६ का गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार इस वर्ष प्रख्यात वैदिक विद्वान् डॉ० जयदत्त उप्रेती, अल्मोड़ा, को उनकी महत्वपूर्ण कृति 'देवार्थ प्रकाश' पर तथा महाराष्ट्र के प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी क्रांतिवेश (गुरू जी) के 'सम्यक दर्शन' ग्रन्थ पर प्रदान किया जायेगा । पुरस्कार में २१००० रुपये की राशि, स्मृति चिन्ह तथा अंगवस्त्रम् से विशेष समारोह में उन्हें समलंकृत किया जायेगा।

(राधे मोहन)

प्रधान

गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति, प्रयाग

www.thearyasamaj.org

।। ओ३म् ।।

गंगा प्रसाद उपाध्याय का दृष्टिकोण

आर्य समाज के प्रख्यात विद्वान् एवं पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय के अनन्य भक्त जिन्होंने उनके ग्रन्थों को गंगा ज्ञान सागर एवं गंगा ज्ञानधारा में कई खण्डों में प्रकाशित करके अभूतपूर्व सराहनीय कार्य किया है। ऐसे पूज्य राजेन्द्र जिज्ञासु जी का मेरे प्रति विशेष स्नेह है। उन्होंने मुझसे आग्रह किया कि आपको पं० जी के चरणों में बैठने का दीर्घकाल तक सौभाग्य प्राप्त हुआ है और आपने उनकी भरपूर सेवा की है, अतः उनके विचारों एवं दृष्टिकोण से भलीभाँति सुपरिचित हैं। अतः आप उनके दृष्टिकोण को प्रकाशित करें जिस पर आर्य समाज के नेताओं एवं आन्दोलन से वे असहमत थे। जिज्ञासु का कथन पूर्णतया सत्य है कि मुझे लम्बे समय तक पूज्य पं० जी की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त रहा है। उनके जीवन के उत्तरार्द्ध में वाणी उनकी और अपनी लेखनी से उनके विचारों को पत्र-पत्रिकाओं में मूर्त रूप देता रहा हूँ, 'आर्य समाज और इस्लाम' नामक पुस्तक पूर्ण रूप से मेरे द्वारा लिखी गयी है। विचार उनके, लेखनी मेरी थी। मैं इस लेख के द्वारा पं० जी के विचारों को उद्धृत कर रहा हूँ।

आर्य समाज और हिन्दी सत्याग्रह

पं० जी की आन्तरिक इच्छा थी कि महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के सार्वभौतिक सिद्धान्तों को विश्व के मानवों को अच्छी तरह परिचित कराया जाये यह तभी सम्भव होगा कि हिन्दी के अतिरिक्त अन्य विभिन्न भाषाओं में पुस्तिका प्रकाशित करायी जाये चाहे उनकी भाषा अवैज्ञानिक और कितनी भी त्रुटिपूर्ण क्यों न हो ? हमारे विचार उनकी भाषा के द्वारा ही पहुँचाना चाहिए। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने जहाँ हिन्दी में आस्तिकवाद अद्वैतवाद, शांकर भाष्या लोचन आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों की रचना की वहीं जनसाधारण के लिये शताधिक १२, १६ पेजी ट्रैक्टों को लिखा। इसी प्रकार अंग्रेजी जानने वालों के लिए 'फिलासपी आफ दयानन्द' आई 'एण्ड माई गाड' 'क्रिश्चियन्टी इन इण्डिया' आदि ग्रन्थों तथा अंग्रेजी में अनेक ट्रैक्टों को प्रकाशित किया जो देश विदेश में आर्य समाज के गौरव बढ़ाने वाला सिद्ध हुआ है। उपाध्याय जी ने सत्यार्थ प्रकाश का 'लाइट ऑफ ट्रथ' नाम से स्वयं अनुवाद किया तथा बर्मी भाषा में सत्यार्थ प्रकाश का अनुवाद कराया। यह उनके आपके दृष्टिकोण तथा महत्वाकांक्षा का परिचायक है। हिन्दू मुसलमानों की खांई पाटने व आर्य समाज के मौलिक सिद्धान्तों से उन्हें परिचित कराने हेतु आपने उर्दू में 'मसावीहुल इस्लाम' तथा हिन्दी में 'इस्लाम का दीपक' तथा 'कर्मफल सिद्धान्त' का उर्दू अनुवाद 'फलसफा आमाल' प्रकाशित किया। ८० वर्ष की आयु में मौलवी वली उल्लाह तथा अली अकबर से अरबी भाषा पढ़ी और उर्दू में मुस्लिमों के कमजोरियों के निराकरण हेतु उर्दू में १० ट्रैक्ट लिखे जिसे ईद के अवसर पर हम लोग वितरित किया करते थे। मैंने रामपुर से हिन्दी में प्रकाशित इस्लामिक साहित्य जब उन्हें दिखाया तब उनके मुख से यह शब्द निकला था कि अब मुसलमानों को बुद्धि आयी है। यदि वे मुगल राज्य में हिन्दी में अपना साहित्य प्रकाशित करते तो नक्शा और ही होता।

आर्य समाज ने अतीत में अनेक सत्याग्रह किये, इसमें आर्य समाज को विजयश्री मिली। पंजाब

www.thearyasamaj.org

में जब प्रताप सिंह कैरों की सरकार बनी तो उन्होंने गुरूमुखी भाषा को प्रतिष्ठापित करना चाहा तो आर्य समाज ने हिन्दी के पक्ष में उसका विरोध किया। अन्ततोगत्वा बात न मानने पर आर्य समाज ने सत्याग्रह का बिगुल बजा दिया और सार्वदेशिक सभा के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रान्तों से आर्य सत्याग्रही पंजाब पहुँचने लगे। प्रयाग से मेरे पिता जी भी ने इस सत्याग्रह में भाग लिया था। उन दिनों जहाँ प्रताप सिंह कैरों की आर्य नेतागण आलोचना करते थे वहीं गुरूमुखी भाषा पर भी प्रहार करते थे। जैसे जैसे आन्दोलन उग्र होता गया वैसे-वैसे उपाध्याय जी की चिन्ता बढ़ती गयी। वे कहते थे कि आर्य समाज अपने लक्ष्य से भटक गया है। वे कहते थे कि आर्य समाज को सभी भाषाओं में प्रचार करना चाहिए। आर्य समाज को इस आन्दोलन का नेता नहीं बनना चाहिए था। उसके लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन व नागरी प्रचारिणी सभा को आगे आना चाहिए था। हमें याद है जब महात्मा आनन्द स्वामी ने उस आन्दोलन के सम्बन्ध में कुछ विरोध किया तो स्वामी रामेश्वानन्द सांसद ने क्रुद्ध होकर कहा था कि 'आनन्द स्वामी ने आर्य समाज की पीठ पर छूरा भोंका है।' पूज्य उपाध्याय जी का दृष्टिकोण था कि आर्य समाज को विश्व भर में 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के उद्घोष को पूरा करने के लिए किसी भाषा का विरोध न करते हुए अपनी बातों को उन्हीं की भाषा में समझाने का यत्न करना चाहिए। क्योंकि किसी भाषा का विरोध करने से लाभ के स्थान पर हानि ही होगी।

राधे मोहन
प्रधान
गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति, प्रयाग

आर्य समाज नरवा पीताम्बरपुर का २६वां वार्षिकोत्सव एवं वेद प्रचार शिविर सम्पन्न

''आर्य समाज कलकत्ता के प्रेरणा एवं सहयोग से उत्तर प्रदेश के अम्बेदकर नगर जनपद के अन्तर्गत सरयू नदी से १ मील दक्षिण स्थित नरवा पीताम्बरपुर ग्राम के अन्तर्गत २६वां वेद प्रचार का त्रिदिवसीय कार्यक्रम दिनांक १८, १९ एवं २० अक्टूबर को सम्पन्न हुआ।''

१. सामवेद पारायण यज्ञ आचार्य डॉ० शिवदत्त पाण्डेय (वेद-वेदाङ्ग गुरुकुल विद्यापीठ जनपद सुलतानपुर) के ब्रह्मत्व में सम्पन्न हुआ जिसमें वेदपाठी ऋत्विकगण गुरुकुल के ब्रह्मचारी थे। यजमान-श्री संतोष मिश्र (राजू) प्रधान, श्री कृष्ण मोहन मिश्र, मंत्री, श्री सजीवन जायसवाल, श्री गिरजा प्रसाद मिश्र, श्री सुदामा मिश्र, श्री चिन्तामणी मिश्र एवं श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल।

बाहर से पधारने वाले अन्य विद्वान् पं० युगल किशोर त्रिपाठी, श्री त्रिगुणी नारायण पाठक, स्वामी आनन्द मुनि, श्री सन्तमुनि, कलकत्ता।

लल्लन ब्रह्मचारी डिग्री कालेज राजे सुल्तानपुर में छात्र प्रभात मिश्र के प्रयास से छात्र-छात्राओं के बीच डॉ० शिवदत्त पाण्डेय का ईश्वर के नाम की व्याख्या एवं पं० युगलकिशोर त्रिपाठी का प्रदर्शन सराहनीय रहा। एक शतायु माता का सम्मान एवं धनुर्विद्या के प्रदर्शन के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

वेद प्रचार के पश्चात् मीटिंग में श्री सुदामा मिश्र को आर्य वीर दल प्रमुख एवं प्रभंजन मिश्र एवं प्रभात मिश्र को प्रचार एवं युवा कल्याण का दायित्व प्रदान किया गया। - **राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल**

www.thearyasamaj.org

''काल''-''समय'' की महिमा

– मृदुला अग्रवाल

''काल''-''समय'' प्रकृति का अमूल्य उपहार है । काल का चक्र सर्वदा गतिशील रहता है । मनुष्य-जीवन का प्रत्येक क्षण अत्युत्तम है, अनमोल है, कीमती है । प्रत्येक कार्यक्रम का जीवन में एक निश्चित समय होना चाहिये । घड़ी की सुईयाँ भी समय ही तो निर्धारित करती हैं । बीता हुआ समय दुबारा लौटकर नहीं आता । प्रभु ने प्रत्येक प्राणी के जीने का समय पहले से ही निश्चित कर रक्खा है। इसलिये मनुष्य को अपना कर्त्तव्य समझकर प्रत्येक कार्य को समय पर सम्पन्न करना चाहिये ।

''काल करे सो आज कर, आज करे सो अब ।
पल में परलय होएगी, बहुरि करोगे कब ।।'' — संत कबीर ।।

''काल'' वा ''समय'' को अनुशासित करने के चरित्र को महान् बनाने में विशेष सहायता प्राप्त होती है । उसे अपने जीवन में नियोजित करने से ही हम उन्नति के शिखर पर पहुँच पाते हैं । हर व्यक्ति को चिन्ता करने में समय नष्ट नहीं करना चाहिये । जो व्यक्ति काल को स्वयं नष्ट करते हैं, वे ही अपने जीवन में पछताते हैं — ''अब पछताए होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत,'' काल = समय का समुद्र की लहरें कभी भी किसी की प्रतीक्षा नहीं करती — वे अपने ही धुन में आगे बढ़ते रहते हैं ।

''कालो अश्वो बहति सप्तरश्मि : सहस्त्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ।।''

— अथर्ववेद, काण्ड-१९, सूक्त-५३, मन्त्र-१।।

''काल'' वा ''समय'' का घोड़ा विश्व के रथ को चला रहा है । सात प्रकार की शुक्ल, नील, पीत, रक्त, हरित, कपिश, चित्र वर्ण किरणों वाले सूर्य के समान प्रकाशमान, सहस्त्रों नेत्रों वाला, बूढ़ा न होने वाला, महा बलवान काल वा समयरूपी घोड़ा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में निष्पक्ष घूम रहा है । ज्ञानवान् बुद्धिमान लोग अपने पांडित्य से, लियाकत से उस पर चढ़ कर अपने लक्ष्य की प्राप्ति भी कर लेते हैं और बाकी सब प्राणी उसके पहिये से ही लिपट कर रह जाते हैं ।

सात प्राण, सात = तीन काल एवं चार दिशाएँ, सात शिक्षाएँ, सात भूमि, अनगिनित सूर्य, पृथिवी एवं प्राणी सब ''काल'' से भयभीत हैं । जो विद्वान् हैं वे अपनी विद्वता से ''समय'' को जीत लेते हैं और जो मूर्ख हैं उनको ''समय'' जीत लेता है । ''काल''-''समय'' के उत्तम उपयोग या व्यवहार से मनुष्य ब्रह्मचर्य के साथ श्रेष्ठ कर्म और वेदाध्ययन आदि करते हैं और प्रजापालक होते हैं ।

यह जगत् ''काल'' से ही उत्पन्न होकर ''काल'' में ही दृढ़ प्रतिष्ठित है । वही बढ़ता हुआ अन्न होकर सबसे ऊँचे ठहरे हुए मनुष्य को पालता है । ''काल'' वा ''समय'' के सुप्रयोग से धर्मात्मा लोग सम्पत्ति एवं सफलता के साथ सद्गति को प्राप्त होते हैं । ''काल'' सब स्थानों में परमात्मा के सामर्थ्य के बीच विद्यमान है । उसकी महिमा को बुद्धिवंत लोग जानते हैं ।

सृष्टि, स्थिति, प्रलय—तीनों ईश्वरीय कार्यों में ''काल'' ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । भगवद्-

www.thearyasamaj.org

गीता के १०वें अध्याय के ३२वें एवं ३३वें श्लोकों में श्रीकृष्ण भगवान कहते हैं कि क्षण, घड़ी, दिन, पक्ष, मास आदि में जो ''काल'' वा ''समय'' है वह मैं ही हूँ। सृष्टि का आदि, मध्य, अन्त मैं ही हूँ। अक्षय काल अर्थात् काल का भी महाकाल मैं ही हूँ। सबकी उत्पत्ति का कारण, सबका धारण-पोषण करने वाला, सबका नाश, संहार, प्रलय करने वाला मैं ही हूँ। यह सब ''काल'' द्वारा ही सिद्ध होता है। प्रलय के पीछे, सृष्टि के आदि में ''काल'' के ही प्रभाव से अजन्मा परमात्मा अपने गुणों और अद्भुत रचनाओं को उत्पन्न कर प्रसिद्ध होता है। ''काल'' के प्रभाव से ही आगे-पीछे की सृष्टि एवं वेदों का प्रादुर्भाव होता है। ''काल'' ही सृष्टि का पिता एवं पुत्र है। ''समय'' वा ''काल'' के कारण वायु, पृथिवी, आकाश आदि के परमाणु संयोग पाकर साकार होकर संसार का उपकार करते हैं। ''काल'' से ही यजुर्वेद (सत्कर्मों का ज्ञान) उत्पन्न हुआ है।

यजुर्वेद, अध्याय-२७, मन्त्र-४५ के अनुसार जो आप्त मनुष्य हैं, विद्वान् एवं जिज्ञासु पुरूष हैं वे व्यर्थ ''काल'' नहीं खोते। ''संवत्सर'' के तुल्य सुन्दर नियमों से वर्त्तते हुए कर्त्तव्य कर्मों को करते हैं, 'परिवत्सर'-व्याज्य वर्ष के समान दुराचरण आदि छोड़ने योग्य कर्मों को छोड़ते हैं, 'वत्सर'-वर्ष के समान प्रभात-काल, दिन-रात, शुक्ल-कृष्ण पक्ष, १२ महीने, वसन्तादि ऋतु सब सुन्दर प्रकार से व्यतीत करते हैं। इसलिये उत्तम गति के अर्थ प्रयत्न कर अच्छे मार्ग से चल शुभ गुणों और सुखों का विस्तार करते हैं। सुन्दर लक्षणों वाली वाणी के सहित धर्म ग्रहण और अधर्म के त्याग में दृढ़ उत्साही होते हैं।

१२ महीनों के नाम इस प्रकार हैं :–

''मधवे स्वाहा, माधवाय स्वाहा, शुक्राय स्वाहा, शुचये स्वाहा, नभसे स्वाहा, नभस्याय स्वाहेषाय स्वार्होजाय स्वाहा, सहसे स्वाहा, सहस्याय स्वाहा, तपसे स्वाहा, तपस्याय स्वाहाअं हसस्पतये स्वाहा।''

— यजुर्वेद, अध्याय-१२, मन्त्र-३१॥

हे मनुष्यों ! आप लोग ''मधवे''-मीठेपन आदि को उत्पन्न करने हारे ''चैत्र'' के लिये यज्ञक्रिया का अनुष्ठान करो। इसी प्रकार ''माधवाय'' (मधुरपन) — ''वैशाख,'' ''शुक्राय'' (जल आदि को पवन के वेग से निर्मल करना) = ''ज्येष्ठ,'' ''शुचये'' (वर्षा के योग से भूमि को पवित्र करना) = ''आषाढ़,'' ''नभसे'' (सघन घन बादलों की धनघोर सुनवाने वाले) = ''श्रावण,'' ''नभस्याय'' (आकाश में वर्षा से प्रसिद्ध) = ''भादों,'' ''इषाय'' (अन्न उत्पन्न कराने वाले) = ''क्वार,'' ''ऊर्जाय'' (बलयुक्त अन्न बाजरा आदि को पकाने वाले) = ''कार्तिक'', ''सहसे'' (बल देने वाले) = ''अगहन,'' ''सहस्याय'' (बल देने वाले) = ''पोष'', ''तपसे'' (ऋतु बदलने से) धीरे-धीरे शीत की निवृत्ति और जीवों के शरीरों में गरमी की प्रवृत्ति कराने वाले) = ''माघ'', ''तपस्याय'' (जीवों के शरीरों में गर्मी की प्रवृत्ति कराने वाले) = ''फाल्गुन'', ''अंहस'' (पालने वाले के लिये) = ''मलमास''।

कांतिमय ''काल''=''समय'' प्रकाशस्तम्भ की तरह चमकता है। वह दुष्टों का संहार करके व्यवहार-कुशल मनुष्यों का समर्थन करता है। ''काल'' सब प्राणियों को जीवित रखने की कोशिश करता हैं क्योंकि वह स्वयं उनमें व्याप्त रहता है। उससे बड़ी कोई शक्ति नहीं है, इसीलिये वह ''दिव्य-पदार्थ'' वा ''देवता'' कहलाता है। ''काल'' के उत्तम उपयोग से मन और प्राण अर्थात् सब इन्द्रियों

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

www.thearyasamaj.org

बिलाव

गंगा के किनारे पर्वत था गिद्धौर । वहाँ पाकड़ का पेड़ था । उस पर पक्षी रहते थे । उनमें एक गिद्ध भी था — जरद्गव । वह बूढ़ा हो गया था । उसे भोजन-पानी जुटाने में परेशानी होती थी ।

एक दिन पक्षियों ने जरद्गव से कहा — ''तुम बूढ़े हो गए हों । कहीं आ-जा नहीं सकते । तुम हमारे बच्चों की देखभाल करो । इसके बदले हम तुम्हें भोजन दे दिया करेंगे ।'' जरद्गव ने यह प्रस्ताव मान लिया । पक्षी दिन-भर निश्चिंत होकर घूमते-फिरते । जरद्गव उनके बच्चों की देखभाल करता ।

एक दिन वहाँ बिलाव आ गया । पक्षियों के बच्चों को देख उसकी लार टपकने लगी । सहसा पक्षियों के बच्चे रोने लगे ।

रोना सुन जरद्गव चौंकन्ना हो गया । उसने आवाज दी — ''कौन है ? कौन है ?'' बिलाव ने जरद्गव को देखा । उसने सोचा — ''डरने से काम नहीं चलेगा । इसे किसी तरह बातों में फाँसना चाहिए ।''

बिलाव बोला — ''मैं हूँ दीर्घकर्ण नामक बिलाव । आपके दर्शन करने यहाँ आया था । जंगल में आपके धर्म-कर्म की धूम मची है । सोचा—आपसे आशीर्वाद लेता चलूं ।''

यह सुन जरद्गव का क्रोध कम हो गया । बोला — ''बिलाव तुम्हारी बिरादरी हिंसक होती है । इसलिए तुम्हें देखकर मेरा मन अशांत हो गया था । पर तुम्हारी बातें सुनकर मेरी शंका दूर हो गई ।''

बिलाव को लगा कि जरद्गव अब जाल में फँसने ही वाला है । उसने कहा — ''आजकल मेरा चांद्रायण व्रत चल रहा है । बहुत दिन से मैंने माँस छुआ तक नहीं है ।''

बिलाव की मीठी बातें सुनकर जरद्गव उसके चंगुल में फँस गया । उसने बिलाव को अपने साथ रहने को कह दिया । बिलाव की चाँदी हो गई ।

बिलाव कुछ दिन शांत रहा, पर उसके बाद उसने बच्चों को मारकर खाना शुरू कर दिया । धीरे-धीरे बच्चे कम होते गए ।

पक्षियों ने यह देखा तो हैरान रह गए । वे बच्चों के कम होने का कारण नहीं समझ पा रहे थे ।

एक दिन पक्षियों की नजर जरद्गव के खोखल पर गई । पक्षियों ने देखा — वहाँ पंख पड़े हैं । उन्होंने समझा कि जरद्गव ने ही उनके बच्चों को मारकर खा लिया है । उन्होंने गुस्से में आकर जरद्गव को ही मार डाला ।

बिलाव बहुत चालाक था । वह पक्षियों को इधर-उधर घूमते देख घबरा गया । अब उसने वहाँ रुकना उचित न समझा और मौका मिलते ही वहाँ से खिसक गया ।

(सहजता से दूसरों पर विश्वास मत करो ।)

—०—

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज कलकत्ता के प्रकाशन

पुस्तक विक्रेता, आर्य संस्थाओं, उपदेशकों को ४० प्रतिशत की छूट दी जाती है।

पुस्तक का नाम	लेखक/सम्पादक	मूल्य
१. युग निर्माता सत्यार्थ प्रकाश-संदर्भ दर्पण (ऐतिहासिक संदर्भ में सत्यार्थ प्रकाश की यात्रा का दस्तावेज)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७०.००
२. स्वामी दयानन्द का राजनीति दर्शन (स्वामी दयानन्द के राजनीत दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन)	डॉ० लाल साहेब सिंह	५०.००
३. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज की देन (उन्नीस उत्कृष्ट निबंधों का संग्रह)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय द्वारा सम्पादित	१५.००
४. वैतवाद का उद्भव और विकास (वैतवाद का उसके उद्भव और विकास के वैशिष्ट्य को स्पष्ट करने वाला दर्शन का शोधपूर्ण ग्रंथ)	डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री	२०.००
५. उपनिषद् रहस्य (ईश केन और प्रश्न उपनिषदों की सारगर्भित व्याख्या)	महात्मा नारायण स्वामी ''सरस्वती''	२०.००
६. श्री श्री दयानन्द चरित	श्री सत्यबन्धुदास	१०.००
७. महर्षि दयानन्द की देन (निबन्धों का संग्रह)	आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा प्रकाशित	३०.००
८. धर्मवीर पं० लेखराम	स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	५०.००
९. आनन्द संग्रह (स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज के उपदेशामृत)	वीतराग स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज	२५.००
१०. भाई परमानन्द (बलिदानी वंश के कुलदीपक की अमर कहानी)	श्री बनारसी सिंह	१०.००
११. धर्म का आदि स्रोत	पं० गंगाप्रसाद जी	३०.००
१२. संकल्प सिद्धि (विचारों के संकल्प विकल्प का अनोखा चिन्तन)	स्वामी ज्ञानाश्रम	३०.००
१३. ज्योतिर्मय (श्रीयुत् टी. एल. वास्वानी द्वारा लिखित (Torch Bearer)) का हिन्दी अनुवाद	टी.एल. वास्वानी	३०.००
१४. वेद-वैभव	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१५०.००
१५. कर्मकाण्ड	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१०.००
१६. स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज का योगदान	ले० सत्यप्रिय शास्त्री	५०.००
१७. आर्यसमाज कलकत्ता का इतिहास	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	८०.००
१८. मेरे पिता	इन्द्र विद्यावाचस्पति	५०.००
१९. वेद और स्वामी दयानन्द	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
२०. व्यतीत के यश की धरोहर (महासम्मेलनों के संस्मरणात्मक आकलन)	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	६०.००
२१. Torch Bearer	टी० एल० वास्वानी	३५.००
२२. पं० गुरुदत्त लेखावली	मुनिवर पं० गुरुदत्तजी 'विद्यार्थी'	२५.००
२३. प्रार्थना प्रवचन	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५०.००
२४. सन्ध्यारहस्य एवं सन्ध्या अष्टांग योग	प्रो० चमूपति एवं स्व० आत्मानन्द (एक जिल्द)	३०.००
२५. बंगाल शास्त्रार्थ	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
२६. वेद में गोरक्षा या गोवध	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५.००
२७. वेद रहस्य	महात्मा नारायण स्वामी जी	३५.००
२८. वेद वन्दन	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००
२९. राज प्रजाधर्म प्रबोधभाष्य	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७०.००
३०. वेद-वीथिका	प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००

www.thearyasamaj.org

१८ सितम्बर २०१६ को श्री योगेश राज उपाध्याय ने केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री डॉ० महेन्द्रनाथ पाण्डेय से भेंट कर के उन्हें आचार्य प्रो० उमाकान्त उपाध्याय रचित ''मातृभूमि वैभवम्'' की प्रति भेंट की । डॉ० राजश्री शुक्ला ने आचार्य उमाकान्त जी द्वारा लन्दन विश्वधर्म सम्मेलन में दिये गये भाषण की भी एक प्रति मन्त्री महोदय को सादर भेंट की ।

परिलक्षित (बायें से दायें) डॉ० राजश्री शुक्ला, श्री योगेश राज उपाध्याय, डॉ० महेन्द्रनाथ पाण्डेय, श्री अमिताभ शुक्ला ।

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित । मो. : ९८३०३७०४६३